नाचा

-डॉ. योगेन्द्र चौबे

सदा भवानी दाहिनी, सन्मुख रहे गणेश जी,

पाँच देव रक्षा करे, ब्रम्हा विष्णु महेश जी।

सरस्वती ने स्वर दिया, गुरू ने दिया ज्ञान जी,

माता-पिता ने जन्म दिया, के रूप दिया भगवान जी ।।

आ.... आ....

इस वंदना के साथ प्रारंभ होता है छत्तीसगढ़ का प्रमुख लोकनाट्य 'नाचा'। नाचा के वादक कलाकार अपने वाद्ययंत्रों के साथ मंच पर प्रवेश करते हैं, सारंगी वाला कोई लंबी तान छोड़ता है। तबला मास्टर तबला का सुर ठीक करता है और पेटी मास्टर (हारमोनियम वादक) साजपरि (नर्तकी) को सुर देता है और परी तैयार हो जाती है प्रस्तुति के लिए और गाना प्रारंभ करती है:

गाइये हो गणपति जगवंदन...

छत्तीसगढ़ी लोक परम्परा की अमूल्य धरोहर है 'नाचा'। नाचा छत्तीसगढ़ के लोक जीवन की सहजता, उत्साह, पीड़ा, व्यथा, आर्थिक अभाव व समाज के दर्द का प्रतिनिधित्व करता है।

लोक का हर कलाकार अपने समय के यशस्वी पात्रों को ढूढ़ता हैं और अगर उन्हें यह पात्र अपने समय में नहीं मिलते तो वे बीते समय में जाकर उसकी कहानी खोज निकालता है और एक नए आख्यान को रचने की कोशिश करता है। उनका यह आख्यान सामाजिक, पौराणिक और धार्मिक भी हो सकता है। नाचा के कलाकार अपनी प्रस्तुति में ऐसे ही लोक आख्यानों को रचते हैं। यहां यह महत्वपूर्ण है कि नाचा की विषयवस्तु मूलतः सामाजिक होती है और यह लोक स्मृतियों से आती और जाती है तथा बोलियों में रच-बस जाती है। "बोलियां अपने शब्द लेकर दूसरे आख्यानों में प्रवेश कर जाती हैं और आख्यान बोलियों पर छा जाते हैं। वह समय पाकर निरंतर बदलते रहते हैं। उनका पाठ निश्चित करना असंभव है। अगर उन्हें गुम हो जाने के डर से लिख लिया जाए तो वे जल्दी ही झूठे लगने लगते हैं क्योंकि वाचिक परम्परा उन्हें लगातार बदलती रहती है। उनमें न जाने कहां-कहां कि घटनाएं आकर जुड़ती चली जाती हैं।"[1] हमारी यह वाचिक परम्परा लोकानुराग पर टिकी हुई है और यही कारण है कि नाचा एवं गम्मत की प्रस्तुतियां हमेशा समसामायिक लगती हैं। स्वाभाविक रूप से नाचा की प्रस्तुति छत्तीसगढ़ी लोक तत्वों पर आधारित होती है और गंभीर से गंभीर घटनाओं पर आधारित कहानी को भी नाचा का कलाकार बड़ी सहजता और सरलतम रूप से हास्य को आधार बनाकर प्रस्तुत करता है। इस सहजता में एक ओर हास्य है तो वहीं दूसरी ओर व्यंग्य भी मौजूद है।

छत्तीसगढ़ी नाचा का इतिहास बहुत ज्यादा पुराना नहीं है। "1930 के आस-पास की कुछ जानकारियां निकलती हैं। उनके अनुसार उस समय रायगढ़ के लाला फूलचंद और मुंशी, जाँजगीर के धरमलाल कश्यप, चूड़ामणी शर्मा और राधेश्याम बिलासपुर के सुखसागर, बालाराम और दूरबीनदास, रायपुर के जगमोहन, दुर्ग के ठाकुर राम, राजनांदगांव के मदन राम और लालू राम ने अपने नाचा से छत्तीसगढ़ में खूब धूम मचाई थी।"[2] ऐसा नहीं है कि सिनेमा का प्रभाव वर्तमान में लोक कला को प्रभावित कर रहा है बल्कि सिनेमा ने प्रारंभ से ही भारतीय लोक कला को प्रभावित किया है। जिसका उदाहरण हमें नाचा में भी दिखाई देता है। "1953 के आसपास नाचा के तीनों अंगों संगीत, नृत्य और प्रहसनों में फिल्म की फूहड़ता धीरे- धीरे घुस आई। सिनेमा के आने से पहले तक छत्तीसगढ़ की नाचा पार्टियों द्वारा लोकगीतों के रूप में संस्कार गीत व भजन गाये जाते थे। अब उनका स्थान सिनेमा के लोकप्रिय गीतों ने ले लिया था और नाचा में गम्मत भी इसी समय से आया था ऐसा कहा जाता है। 1953 का यह दौर नाचा के स्वरूप में बड़े परिवर्तन का दौर कहा जा सकता है। क्योंकि नाचा अब भजन और लोकगीतों की बंदिश से आगे निकल कर राग-विराग, सुख-दुख, हास्य रस से संबंधित नाच-गाने के माध्यम से लोकप्रियता हासिल करने लगा था। यह बात अलग है कुछ लोग यहीं से नाचा के पतन की शुरूआत भी देखते हैं।"[3] किन्तु इन सब के बावजूद भी छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य नाचा अपनी विशिष्टताओं के साथ मौजूद है।

नाचा की विशेषता यह है कि इनके पास लिखित पाण्डुलिपि नहीं होती और न रातभर चलने वाले इस कार्यक्रम के लिए कोई क्रम निर्धारण। नाचा के पात्र चमत्कारिक रूप से रातभर बिना अभ्यास किये अपनी भूमिका करते जाते हैं। तत्काल किसी घटना पर नाचा कलाकार अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं और यह प्रतिक्रिया इतनी पैनी और सूक्ष्म होती है कि आश्चर्य होता है। एक प्रशिक्षण प्राप्त अभिनेता भी इनकी वाक्पटुता से शरमा जाए।

नाचा मात्र मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह समर्थ है सामाजिक मूल्यों, सामाजिक चेतना को जागृत करने में। यही कारण है कि आज भी 'चैनल्स' की बाढ़ के बावजूद छत्तीसगढ़ की ग्रामीण जनता 15-20 कि.मी. पैदल चलकर या साइकिल, बैलगाड़ी में बैठकर परिवार सहित नाचा देखने आते हैं। दिनभर कड़ी मेहनत के बावजूद छत्तीसगढ़ का यह लोक मानस खुले आकाश के नीचे नाचा देखकर अपनी सारी थकान, सारा दुख दर्द भूल जाता है। अक्सर नाचा के ये कलाकार गांव के किसी मुखिया या सरपंच के बड़े परछी को ही अपने मुक्ताकाशी मंच के रूप में प्रयोग करते हैं

नाचा में एक अभिनेता कई पात्रों को अभिनीत करता है। नाचा के इन कलाकारों में अभिनय के चारों रूपों, आंगिक, वाचिक, अहार्य एवं सात्विक का सुंदर समन्वय दिखाई देता है। संवाद संप्रेषण की शैली, अंग संचालन, नृत्य और गीत में नाचा के कलाकारों को दक्षता हासिल होती है और पूरी दक्षता के साथ यह कलाकार दर्शकों तक सीधे अपनी बात कहने में सक्षम होते हैं।

नाचा के पूर्वरंग में नचकारिन (परी) के गीत-नृत्य के बाद जोकरों (गम्मतिहा) का प्रवेश होता है। जोक्कड़ नाचा गम्मत के मेरूदण्ड हैं। ये जितने कला प्रवीण और दक्ष होंगे नाचा मण्डली उतनी ही प्रसिद्ध होगी। ये गम्मतिहा प्रारंभ में नचौड़ी नृत्य पर साखी व पहेली के माध्यम से नाचा में गम्मत का माहौल तैयार करते हैं और गीत नृत्य में डूबे दर्शकों को यह आभास हो जाता है कि अब गम्मत (प्रहसन) प्रारंभ होने वाला है।

छत्तीसगढ़ की लोक कलाओं में सर्वोपरि नाचा के अन्तर्गत गम्मत (प्रहसन) नाचा का एक प्रमुख अंग है। मनोरंजन, चुटीले व्यंग्य से भरपूर यह गम्मत हास्य प्रधान होता है। गम्मत के कलाकारों में आशु अभिनय (इम्प्रोवाईजेशन) देखते ही बनता है। आपसी तालमेल, सहजता, एक दूसरे को पूरा 'स्पेस' देना, एक दूसरे की बात सुनना, फिर उस पर प्रतिक्रिया देना अर्थात् 'एक्शन' और 'रिएक्शन' का सुंदर तालमेल इन कलाकारों में दिखालाई पड़ता है। नाचा के कलाकार गीत-गायन, नृत्य और संवाद अदायगी में बड़े कुशल होते हैं। वे बात से बात बनाने में माहिर होते हैं, इसलिए कहा जाता है-

वो चीज़। [4]"केले के पत्ते की तरह। वैसे, जोकर की बातचीत में वो

गम्मत या नाचा का विषय मूलतः तात्कालिक होता है। लोक कलाकार इतने निष्णात होते हैं कि तात्कालिक घटनाओं को भी नाट्य रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं। इसका प्रमाण है विश्व विख्यात नाचा के पर्याय बने कलाकार मदन निषाद। उन्होंने एक जगह कहा है वो समय तो बस मंच मा उतर जांव रात भर नाचा करत न लिखे ल जानन न नाचा ला लिखन। स्पष्ट है नाचा की कोई स्क्रिप्ट नहीं होती। राजेन्द्र वर्मा ने लोक कलाकारों की विशेषता बतलाते हुए कहा है- "स्वरचित और आशु संवाद, आत्मस्फूर्त, स्वाभाविक अभिनय क्षमता, त्वरित सम्प्रेषणीयता ही इन कलाकारों को अद्‌वितीय बनाती है। उनके प्रश्न के उत्तर में मदन निषाद ने नाचा और थियेटर का बुनियादी फर्क इन शब्दों में बतलाया है- "थियेटर में निर्देशक की तलवार के साये में काम करने जैसा लगता था। स्पष्ट निर्देश होता था डायलॉग में कोई शब्द टूटना या गलत नहीं होना चाहिए। रंगमंच से नाचा अधिक अनुशासन की मांग करता है।"[5]

तात्विक रूप से देखा जाए तो नाचा या गम्मत ही मूल रूप से लोकनाट्य है। जिसमें नृत्य, संगीत, गीत तथा अभिनय चारों तत्वों की समवेत प्रस्तुति होती है। ये लोक चेतना की सृजनात्मकविधा है। पहले गम्मत में मशालची मशाल लेकर साज के आगे-आगे विभिन्न हास्य मुद्राओं में नृत्य करता चलता था। लोग खड़े-खड़े ही गम्मत करते थे अब इसके लिए आधुनिक मंच तैयार हो चुके हैं। सोनहा बिहान, चंदैनी गोंदा जैसे सशक्त नाचा पार्टियों में इसे पूरी ऊंचाई मिली है। नाचा या गम्मत का प्रचार भारत के विभिन्न भागों में प्रचलित है। गम्मत में पहले फूहड़ प्रदर्शन की प्रधानता थी परन्तु जांजगीर जिले (पूर्व बिलासपुर) के धरमलाल कौशिक और लक्ष्मण दास चिकरहा ने तथा रवेली के दाऊ मंदरा जी ने समूचे देश में लोकप्रिय बना दिया।

प्रसिद्ध लोक कलाकार तथा नाट्यकर्मी स्वर्गीय खुमान साव ने दाऊ मंदरा जी को शिखर पुरूष की संज्ञा से विभूषित किया है। उन्होंने बतलाया है "उन दिनों खड़े साज का प्रचलन था। सभी साजिंदे अपने साज

कमर में बांधकर या गले में लटकाकर नाचा करते थे। नाचा में प्रारंभिक काल में परी नर्तक का गायक होना आवश्यक नहीं था। साजिंदे ही गायक होते थे। परी का अभिनय करने वाले कलाकार सिर्फ भावाभिनय करते थे।"[6]

पहले चिकारा, मंजीरा और तबला प्रमुख वाद्य थे। धीरे-धीरे इसमें हारमोनियम, ढोलक, बांसुरी, क्लारनेट, शहनाई, बेन्जो आदि का समावेश हुआ और गायक वृन्द बैठकर ही गायन वादन करने लगे। परी जिसमें कम से कम तीन या चार लड़के लड़कियों के साज श्रृंगार में पूरे हाव भाव के साथ नाचने लगे। इसका दूसरा भाग प्रहसन है। जिसमें तात्कालिक अन्याय, भ्रष्टाचार, मंहगाई, दहेज प्रथा, सास बहु का झगड़ा, पंच सरपंच, कोटवार जैसी समस्याओं को समाधान के साथ प्रस्तुत किया जाता है। धरमलाल और लक्ष्मण दास की पार्टी के बाद पहली व्यवस्थित पार्टी सन् 1928 में स्व. मंदरा जी दाऊ रवेली वाले ने बनाई। दाऊ जी 300 एकड़ जमीन के मालिक थे। उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति और अमूल्य जीवन पार्टी के लिए लगा दिया। उन्होंने चुनुराम, रामरतन गौड़, रामगुलाम निर्मलकर, सुकलू राऊत, नोहर दास मानिकपुरी, पंचराम देवदास, धनऊ, सकालू राम साहू, मदन निषाद जैसे विश्व विख्यात कलाकारों को सर्वप्रथम शिक्षित किया। उनकी पार्टी सन् 1928 से 1955 तक रवेली पार्टी के नाम से सक्रिय रही।

नाचा-गम्मत का कथानक या विषयवस्तु लोक जीवन से ही लिया जाता है। रोजमर्रा की छोटी-छोटी आवश्यकताओं, घटनाओं को नाचा के ये कलाकार छोटी-छोटी मनोरंजक कलाओं में बदल देते हैं। लोक मानस जिस बात को समूह में नहीं स्वीकार कर पाता, नाचा के कलाकार बड़ी सहजता से उसका मखौल उड़ाते हुए दिखाई पड़ जाते हैं। जैसे बीस सूत्रीय कार्यक्रम, हमारी राजनीतिक व्यवस्था, परिवार नियोजन, सरकारी योजनाएं आदि। जिनसे प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से ये कलाकार जुड़े होते हैं, वहीं इनके लोकनाट्य का कथानक होता है। सामाजिक कुरीतियों, विपदाओं, अंधविश्वास, राजनीतिक, विद्रूपताओं पर तीखा प्रहार किया जाता है। हबीब तनवीर के 'मोर नांव दामाद गांव के नांव ससरार', 'पोंगा पंडित', 'जमादारिन' आदि प्रस्तुतियां नाचा ही हैं। नाचा-गम्मत में जोकर (विदूषक) और नचैया की भूमिका मुख्य होती है। नचैया स्त्रीवेश धारण किए पुरूष कलाकार होते हैं, जो गम्मत में जोकर के साथ मिलकर अभिनय करते हैं। परी की भूमिका नाचा में गम्मत के पूर्व दर्शकों को रिझाने के लिए होती है। परी के बिना नाचा की कल्पना नहीं की जा सकती। सामान्य वेशभूषा में काम चलाकर, जीवन के किसी मार्मिक प्रसंगों को आधार बनाकर, साखी, पहेली, गीत एवं चुटकुलों का सहारा लेकर कथा आगे बढ़ती है।

रात भर चलने वाले नाचा में तीन या चार गम्मत प्रस्तुत किये जाते हैं। प्रत्येक गम्मत के पूर्व साखियां और पहेलियां प्रस्तुत करने की परंपरा है। जीवन और जगत से जुड़ी हुई ये साखियां और पहेलियां एक ओर लोगों का मनोरंजन करती है तो वहीं दूसरी ओर ज्ञानार्जन में सहायक सिद्ध होती हैं। "नाचा में प्रयुक्त होनेवाली साखियों और पहेलियों को डॉ. पीसीलाल यादव ने निम्न भागों में विभाजित किया है"[7]

1. देवी-देवता संबंधी साखियां

2. कृषि संबंधी साखियां

3. नीति संबंधी साखियां

4. मानवीय संबंधी साखियां

5. द्विअर्थी या यौन प्रतीक संबंधी साखियां

6. पशु-पक्षी, प्रकृति संबंधी साखियां

7. अन्य साखियां

"इसके साथ ही छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य के अध्येता डॉ. पीसीलाल यादव ने कुछ उदाहरणों से इसे और भी स्पष्ट किया है"[8]

1. पानी तिहां बूंद नहीं, आगी तिहां नहीं आँच।

पंच तिहां नियावन नहीं, बिन दूल्हा जाय बारात ।।

इस साखी में गोवर्धन पर्वत, लंका दहन, द्रोपदी चीरहरण व अयोध्या से श्रीराम (दूल्हा) के बिना बारात प्रस्थान की ओर इशारा है।

2. राजा के मरगे हाथी, देवान के मरगे घोड़ा। रांडी के मरगे कुकरी, त एक बराबर होय ।।

यदि राजा का हाथी मर जाए, मंत्री का घोड़ा और गरीब विधवा स्त्री की मुर्गी मर जाए तो इन तीनों की हानि बराबर आंकी जायेगी।

3. तीन गोड़ धरनी धरे, एक गोड़ अगास।

बिन बादर के बरसा, पंडित करो विचार ।।

उपरोक्त साखी में जोक्कड़ कुत्ते की ओर संकेत करता है। तीन पैर धरती पर, एक पैर आकाश की ओर है और बिना बादल के बरसात हो रही है, इस पर गुणीजन विचार करें।

लोक कलाकार अपने आसपास घटित हो रही घटनाओं पर सूक्ष्मता से नजर रखता है और उन्हीं घटनाओं को वह रोचक ढंग से साखी या पहेली के रूप में प्रस्तुत करता है। इसके मूल में लोक का दीर्घकालीन अनुभव ही है जिससे व्यक्ति होकर गुजरता है। नाचा को पुनर्स्थापित करने वालों में दाऊ रामचन्द्र देशमुख, दाऊ महासिंह चन्द्राकर, दाऊ मंदराजी का नाम पूरे सम्मान के साथ लिया जाता है। हबीब तनवीर के नया थियेटर में अपने अभिनय से जादू बिखेरने वाले कलाकार मदनराम निषाद, भुलवाराम यादव, फिदाबाई मरकाम, गोविंदराम निर्मलकर, रामचरण निर्मलकर, देवीलाल नाग जैसे कलाकार नाचा के ही कलाकार थे। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि हबीब साहब ने नाचा के इन नामचीन कलाकारों के साथ मिलकर ही भारतीय रंगमंच को एक नई राह दिखाई है।

देश के सुप्रसिद्ध रंगकर्मी हबीब तनवीर नाचा से प्रभावित थे और बाद में उन्होंने इसे अपनी प्रस्तुति की एक शैली के रूप में विकसित किया। हबीब साहब ब्रेख्त से प्रभावित थे और जब हबीब साहब ने नाचा को देखा तो उसमें समाहित " अलगाववाद का सिद्धांत" (द थेओरी ऑफ एलिनेशन) से प्रभावित हुए। नाचा का कलाकार ब्रेख्त की इस सिद्धांत को अनजाने ही लागू कर रहा था। वैसे भी ब्रेख्त ने यह माना है कि उनका यह सिद्धांत यहां के लोक नाटकों से प्रभावित है। हबीब साहब नाचा की इसी विशेषता से प्रभावित हुए और बाद में यही विशेषता हबीब साहब का हस्ताक्षर बनी।

सही मायने में नाचा सामूहिक सृजन है, व्यक्तिपरक नहीं। निर्देशक विहीन इस रंगमंच में पेटी मास्टर ही सामान्यतः मुखिया अथवा निर्देशक की भूमिका अदा करता है। यदि इसकी विषयवस्तु का अध्ययन करें तो पता चलता है कि नाचा गम्मत केवल और केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि लोक जागरण का माध्यम रहा है। लोक मानस के भीतर समाज, सत्ता के प्रति प्रतिरोध बड़ी सहजता से नाचा की प्रस्तुतियों में दिखाई पड़ता है। हबीब तनवीर के 'पोंगा पंडित' के माध्यम से देशभर के लोग इसकी सार्थकता को देख व समझ चुके हैं।

बदलते समय में जनसंचार की क्रांति ने पूरी दुनिया के कला माध्यमों को चुनौती दी है। छत्तीसगढ़ का यह लोकनाट्य बड़ी सहजता से उसे स्वीकार कर रहा है। 'चैनल्स' की बाढ़ के कारण नाचा की प्रस्तुतियों में भी अंतर दिखाई पड़ने लगा है। विगत दो वर्षों से रिमिक्स का प्रभाव छत्तीसगढ़ी गीत-संगीत में भी देखा जा सकता है। आज का नाचा सर्वथा भिन्न हो चला है, आज गम्मत में भाषायी परिवर्तन मुख्य है। छत्तीसगढ़ी के ठेठ शब्दों के स्थान पर हिन्दी मिश्रित शब्दों का प्रयोग। पूर्व में पुरूष पात्र ही महिला पात्रों को अभिनीत करते थे किन्तु अब नाचा गम्मत में महिला पात्रों का प्रवेश भी होने लगा है।

रूप सज्जा के लिए चॉक, कोयला, गेरू मिट्टी, मृदाशंख के स्थान पर स्नो, पावडर, क्रीम, आइब्रो, लिपस्टिक आदि का प्रयोग प्रारंभ हो चुका है। यही नहीं मेकअप किट तक को स्थान मिल गया है अर्थात् 'सम्हरना' (सजना, संवरना) से लेकर 'मेकअप' तक की यात्रा। छत्तीसगढ़ी संस्कृति को दर्शाने वाले चटख पारम्परिक रंगों एवं छींटदार वाले कुर्ते, धोती की जगह पेंट कमीज, टी शर्ट, सफारी, जूता, लाल मोजा, टाई, धूप का चश्मा आदि नए प्रचलन में आ गए हैं।

कभी संगीत सहयोगी अपने वाद्य यंत्रों को कमर में बांधकर या गले में लटकाकर बजाया करते थे, नाचकर मशाल लेकर नाचा करते थे, लेकिन अब यह खड़े साज का नाचा विलुप्त-सा दिखाई पड़ता है, अब तो संगीत मंडलियों के लिए स्थान निश्चित किया जाता है, न केवल स्थान बल्कि लाइट, माइक का इंतजाम भी आवश्यक हो गया है। तबला, हारमोनियम, चिकारा के साथ ही अब हर मंडली में बेंजो, आर्गन (केसियो) क्लोरेनेट और कुछ समृद्ध मंडलियों ने तो 'ओक्टोपेड' तक का प्रयोग भी प्रारंभ कर दिया है। प्रमुख लोकवाद्य चिकारा और सारंगी तो अब देखने में भी नहीं मिलता, संगीत मंडली में इसका प्रयोग पूरी तरह खत्म हो चुका है। वहीं मशाल का स्थान रंग बिरंगे हैलोजन लाइट ने ले लिया है।

नाचा एवं गम्मत के कथाओं, पात्रों, स्थितियों का जो फिल्मीकरण हुआ, उसके चलते अब नाचा में रोचकता, सहजता, स्वाभाविकता, जीवंतता लगभग समाप्त हो चली है। जोकर, परी एवं नचैया जो कभी प्रमुख पात्र हुआ करते थे, वह अब की प्रस्तुतियों में गायब होने लगे हैं। परी की जगह डांसर ने अपना स्थान बना लिया है। नाचा में ब्रम्हानंद, भजन, करमा-ददरिया, साल्हो पारंपरिक पहेलियां साखी अब बीते जमाने की बात हो गई है। इसकी जगह पापुलर फिल्मी गीतों ने ले ली है। बॉलीवुड के पॉपुलर गानों से लेकर 'काचा बादाम' तक का देशीकरण कुछ नाचा मंडलियों में देखा जा सकता है। परी के बिना नाचा की कल्पना अधूरी थी, लेकिन इधर के कुछ वर्षों में अधिकांशतः नाचा मंडलियां परी को मुजरा के रूप में प्रस्तुत कर रही हैं। इधर माइक, लाउडस्पीकर के उपयोग से नाचा कलाकारों की स्वाभाविक 'रेंज' की क्षमता भी समाप्त हो रही है।

समय बदला, परिस्थितियां बदलीं, समाज बदला लेकिन फिर भी लोकजीवन तथा ग्राम्य संस्कृति ही नाचा का प्राण बना रहा। नाचा की कथावस्तु चाहे पौराणिक हो, ऐतिहासिक हो, सामाजिक हो या फिर काल्पनिक ही क्यों न हो उसमें अपने युग के तात्कालिक समाज का लोकजीवन प्रतिबिंबित होता है। बदलता समय, बाजारीकरण का प्रभाव, सोशल मीडिया के बढ़ते प्रभुत्व के बाद भी छत्तीसगढ़ में अब भी कुछ ऐसी नाचा मंडलियां हैं, जो परंपरा को साथ लेकर आधुनिकता की ओर बढ़ रही हैं। परम्परा और आधुनिकता तथा समय के इस बदलते तेवर के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए यह नाचा मंडलियां नाचा को आज भी समृद्ध किये हुए हैं। आज के इस व्यस्ततम जीवन में जहाँ इंसान न सोच पाता है, न हँस पाता है और न ही समझ पाता है, ऐसी स्थिति में नाचा देखकर अब भी छत्तीसगढ़ का लोक मानस अपने दुखों, समस्याओं को कुछ पल के लिए ही सही, भूल जाता है।

संदर्भ सूचीः

1. शुक्ल ध्रुव, मध्यप्रदेश में लोक आख्यान, जनसम्पर्क प्रकाशन मध्यप्रदेश शासन भोपाल, वर्ष 2005, पृष्ठ-9

2. मिश्र योग, रिंगनी-रवेली ने भारतीय रंगमंच को दिखाई नई राह, रंगमंच का भारतीय परिदृश्य, सं. डॉ. योगेन्द्र चौबे, सर्वप्रिय प्रकाशन दिल्ली-रायपुर, वर्ष 2021, पृष्ठ 150

3. नोटबुक, पृष्ठ-150

4. यादव डॉ. पीसीलाल, लोकनाट्य नाचा में साखी परम्परा, कला वैभव अंक वर्ष 2005-06, पृष्ठ-286

5. वर्मा राजेन्द्र, गोंदा के हार में पेट नहीं भरे, मदन निषाद से भेंट, स्मारिका 'गम्मत', पृष्ठ 74 एवं 75

6. ठाकुर चन्द्रकान्त, गम्मत, स्मारिका, पृ

7. यादव डॉ. पीसीलाल, लोकनाट्य नाचा में साखी परम्परा, कला वैभव अंक वर्ष 2005-06, पृष्ठ-286

8. नोटबुक, पृष्ठ-287

-डॉ. योगेन्द्र चौबे

विभागाध्यक्ष, थियेटर विभाग,

इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़